बीसवीं तारीख़ के आस-पास



धर्मेन्द्र पारे

काव्य में ढला हुआ जीवनानुभव अपनी प्रामाणिकता का दस्तावेज़ होता है। इस प्रकार के दस्तावेज़ दलील और पैरवी से परे पाठक को अपनी भावयात्रा में सम्मिलित करके उसके अपने हो जाते हैं।

कहने की आवश्यकता नहीं कि युवा कवि धर्मेन्द्र पारे की कविताओं से गुज़रते हुए पाठक अपने ही अनुभवों के साक्ष्य का सामना करते हुए स्वयं को एक ऐसे भावक्षेत्र में खड़ा देखता है जहाँ जीवन, समाज और समय के प्रश्नों से जूझता हुआ कवि जितना संस्कृति-सचेत है उतना ही समय-सचेत भी। संस्कृति और समय की उसकी यह सचेतनता जितनी संस्कार प्रेरित है उतनी ही राजनीति-प्रेरित, न अधिक न कम। संतुलित और ठीक-ठाक। शेष शताब्दी की कविता इस संतुलन के प्रति सजग रह कर ही भविष्य की कविता की कड़ी के रूप में अपनी पहचान कायम करने के लिए प्रयत्नशील है और 'बीसवीं तारीख़ के आस-पास' में उसका यह प्रयत्न अपनी प्रामाणिकता के साथ विद्यमान है।

शलभ श्रीराम सिंह

रामकृष्ण ग्रन्थमाला
नये कविता-हस्ताक्षर : एक
सम्पादक : शलभ श्रीराम सिंह

बीसवीं तारीख़ के आस-पास

धर्मेन्द्र पारे की पहली कविता पुस्तक
प्रथम संस्करण : 1995

मूल्य : 65/-
आवरण एवं रूपांकन : गिरधर उपाध्याय
डी.टी.पी. कम्पोजिंग : सिल्वर स्कैन कम्प्यूटर सर्विसेज़, विदिशा
मुद्रक : औद्योगिक परामर्श केन्द्र (मुद्रण प्रभाग)
एस.ए.टी.आई. (महाविद्यालय) विदिशा
प्रकाशक : रामकृष्ण प्रकाशन
सावित्री सदन, तिलक चौक
विदिशा (म.प्र.) 464 001

BISWIN TAREEKH KE AAS-PAAS
First Book of Poems by- DHARMENDRA PARE
ISBN : 81-7365-002-5

कविता की यह पहली किताब
अर्चना के लिए

- धर्मेन्द्र

रचनाक्रम





बीसवीं तारीख़ के आस-पास

इस मर्त्य लोक में



पेड़ गिरे
पहाड़ गिरे पर्वत गिरे
पलों में ढह गयीं
तमाम विराट
बुनियादें।

एक दिन
समन्दर मरा
होठों पर।
आसमान मरा
आँखों में
और सीने में
धरती मरी मिली एक दिन।

इस मर्त्य लोक में
इतना सब कुछ करने
पर भी
एक चीज़ बची रह गई
मुझे जीना था तुम्हारा
प्रेम।



और एक बार



सहेजे रखा
आकार देती रहीं
कुछ लड़कियाँ थीं
जो सारी बेतरतीब
चीजों को
तरतीब से रखती रहीं
फिर चाहे
घर गृहस्थी हो
या मन
या जिंदगी ही।

एक बार माँ थी
एक बार बहन
और एक बार
कोई खिड़की में खड़ी थी।



रहने के लिए



धरती
इसलिए धरती थी
कि
जल था उसमें।
आकाश
संभावनाओं से क़ायम था।
समुद्र
विगत आगत अनागत
सब में लौट पड़ता था
इसलिए समुद्र था।
तुम
रह सकती हो
समूची
तुम्हें कोई शर्त
तो निभानी होगी।



अब भी



तुम्हें याद करो तो
अब भी लगता है ऐसा
झूल डाले नंदी
जोतकर
रुनझुन घुघरमाल बजाते
गढ़वाट पार कर
नदी के लौह पत्थरों पर से
गुज़र रही है
छत पर्दे लगी कोई
बैलगाड़ी।
उसमें बैठा है कोई
पाँवों में रमझोल पहने
उसके हाथों में कांकण दोरा
बँधे हैं।
तुम्हें याद करो तो
अब भी लगता है ऐसा।
काकडा आरती
कोई खत्म करेगा
अभी अभी
और अपने
रतजगे अपने पल्लू-

में बँधे गेहूँ
चढ़ा देगा हँसते हुए-
हे नाथ नारायण
हरे परमात्मने .....



एक अन्त ऐसा हुआ



अण्डों को सेते
पंजों की ऊष्मा
की तरह
महसूस किया तुम्हें।

तुम्हें अपने भीतर
बीज में पकते दूध
की तरह
बहते हुए जाना मैंने।

मिट्टी में छुपी
गोकुल गाय की
तरह खोजा तुम्हें
कई बार।

तिनकों की तरह
सुबह से शाम तक
इकट्ठा किया तुम्हें
बरसात से पहले।

बीज की तरह

बिक गयीं तुम !
घर की तरह
सज गयीं तुम !
मुझे लोक कथाओं में
कहा गया
तुम्हें लोकगीतों में
गाया गया।
एक अन्त ऐसा हुआ
और
एकान्त मिला।



फिर भी



इतना लिखा
इतना लिखा
पहाड़ भर यादें
समुद्र भर दुःख
आसमान भर सपने
रात भर आवाजें
दिन भर बातें
धरती भर प्रेम
फिर भी
फिर भी
कितना रीता रह गया
दोस्त के
नाम एक लिफाफा !



बीस तारीख़



बीस तारीख़ की तरह
और भी कई तारीख़ें
बनी होंगी तवारीख
इसी तरह उतर आई होंगी वे
समय को काला करती हुई
मीरा के भजनों में, रेशमा की हीर में
चारदीवारी के भीतर क़ैद कई-कई नयनों में
मांगल्या के विरहा में !

हुए होंगे कवि
मरी होंगी।
कविताएँ, सविताएँ, सुनिताएँ
मगर क्या मर पाई है
आज तक
आदिम पशुता-मध्ययुगीन बर्बरता और
उस के समानान्तर
चलती-ज़ेहाद करती सच्चाई ?
कि किन्हीं खास तारीख़ों से खत्म नहीं होता
प्रेम !

बीस तारीख़ तक जला चुके होंगे वे

उसके सहेजे हुए खत
उसके सपने
उसके गुड्डा गुड्डन-उसके घरकुल्या के खेल से-
धरती पर उतर आई एक कहानी
लेकिन वे कैसे जलायेंगे
उसकी साँसों में पैठी वह महक ?
बंधुआपन से बग़ावत और बग़ावत से पैदा
चमक आँखों की
वह अपनी विरासत को देगी
अपनी अधूरी बग़ावत का
पूरा करता ख्वाब
बीस तारीख़ को वह लड़का
उसकी
ज़िन्दगी से बाहर नहीं होगा
सालों बाद जब भी लौटेगी
शहर को वह लौटते देखेगी
गवाह की तरह।
वे इस कविता को पढ़ेंगे।
और डरेंगे और फाड़ देंगे अखबार
करने लगेंगे हमले
काँप काँप उठेंगे देखेंगे
कमरे की दीवार तो नहीं गिर रही
अखबार में दिखेगा उनको वह लड़का।
अखबार में अन्हें आहट आयेगी
टापों की .....
बस्तर-निमाड़-मालवा-गोंडवाना
और जहाँ जहाँ भी है अँधियारा वीराना
सब तरफ सब ओर से

अपने घर से।

वे ख़ुश हैं यह सोचकर
इज़्ज़त बच गई
लड़की हाथ से निकलने से रह गई
बीस तारीख़ जैसे उनके मोक्ष की तारीख़ हो
पर वे शायद यह नहीं जानते।
वह और उसके जैसी तमाम दुहिताएँ।
अब शीत युद्ध लड़ रहीं हैं ?
आत्मा-मानप्रतितिष्ठा-जातियों-मजहबों
और उन सबों
के खिलाफ़ जो
वृत्त बनाये परिधियों पर
कौओं
गिद्धों की तरह बैठे हैं
बीस तारीख़ को सिर्फ़ खत्म नहीं
होगी तवारीख
शुरू भी होगी !
बीस तारीख़ से खत्म नहीं होता प्रेम
बीस तारीख़ को खत्म नहीं होती बीस तारीख़ !



पेड़ नहीं काटना चाहिए



फिर नदी
अपने घर नहीं लौटी
और पत्ते टहनियों पर।

बच्चे अपने
भोले सपनों में।

लड़कियाँ दुबारा शाम को
चौखटों पे खड़ी
नहीं हुईं।

आँसू धरती में
समा गए।
अहसासों में
दीमक लगती रही लगातार
और सारी सभ्यता
बदल गई एक दिन
राक्षस के सपनों में।

लील जाता है रेगिस्तान का
एक टापू

सारी हरियाली को
तुम्हें कोई हरा पेड़
नहीं काटना चाहिए लोगो !

चिड़िया ने अंडे दिए थे
पेड़ पर यह सोचकर।
तुम्हारी नदी बहती है
पेड़ के पास से
तुम्हारे बच्चे
गलबहियाँ डाले खेलते हैं
पेड़ के पास।
तुम्हारी लड़कियाँ
कइयों बार
शादी कर लेती हैं
पेड़ से।



इस पूरे चक्र में



सब कुछ सँभालते रहे
संदूकों में चिटिठयाँ
अँगुलियों में अंगूठियाँ
गले में नामों के लॉकेट
डायरियों में तितलियाँ
सूखे- फूल पत्ते
रामअष्टक के बांचे
भविष्यफल
और आँजते रहे आँखों में
रेखाएँ, कविताएँ
शब्द नम और पानीदार
सतरंगे सपने ।

इस पूरे चक्र में
भूल गए हम
दीपक राग
राग मेघमल्हार
और
पाताल भैरवी भी ।
और वह
एक लड़की भी

जो गुज़रती थी
फूल लेकर
हमारी आदतों में।

फरिश्तों और देवदूतों ने
जब बँटवारा किया
हमारे हिस्से में कुछ नहीं था।



कुछ दिनों बाद



बार बार
तुम्हारा शब्द
दो शब्द माँगना
मुझे भीतर तक
कँपा जाता है
दो शब्द क्या
एक शब्द देते
मुझे डर लगता है
पहले भी
एक ने
शब्द माँगे थे एक दिन।

और
मैंने दी थी उसको
एक भरी पूरी
सार्थक कविता।

और कुछ दिनों बाद
मुझे मिली थी
एक मरी हुई लड़की
जो दुनिया की सबसे

खतरनाक कविता
होठों पर लिए हुए थी।

मुझे मिला था
एक काला ठनक शब्द
एक स्याह नदी
जिसमें मुझे अनगिन
रातों तक
तैरना था।

आज मेरे पास
कुछ भी नहीं है
सिवाय !

खतरनाक कविता
मरी हुई लड़की
काले शब्द
और स्याह नदी के
●

दुख भरे दिनों में



दुख भरे दिनों में
हमें याद आता है
पिता का सीधापन और अहिंसा ।

दुख भरे दिनों में
हमें याद आता है
माँ का गूँगापन
सब कुछ सहना और
हमें भी गूँगा कर जाना ।

दुख भरे दिनों में
हमें याद आती है
आजा की संस्कारप्रियता
आजी की पतिव्रतता और धार्मिकता ।

दुख भरे दिनों में
हमें याद आता है
मरा हुआ दोस्त
बेवफा प्रेमिका
विरुद्ध व्यवस्था ।

दुख भरे दिनों में
हमें याद आता है
कि हमारे बच्चे
कॉलोनी के बच्चों से
नफीस पैदा क्यों नहीं हुए !

दुख भरे दिनों में
हमें लगता है
हमारे पिता,माँ,आजा-आजी
दोस्त, प्रेमिका और बच्चों ने
इसके अलावा कुछ और क्यों नहीं किया

कुछ और क्यों नहीं सोचा।
दुख भरे दिनों में
खुद को हम कभी याद
नहीं आते !



वह जानने लगी है

•

फ्रेंड्स रुरल सेंटर के मैदान पर
उखड़ती हुई भीतों
जालों, मकड़ियों के बीच
उन्नीस अक्टूबर की रात
पथराई हुई आँखें
भावहीन चेहरा लिए बैठी
वह औरत
नर्मदा की एक सूनी शिला है
वह लड़की
निमाड़ का तपता बंजर है
वह बच्ची
पचमढ़ी का झरना है
मै सोचता हूँ इतना ही नहीं
वह
एक देश भी है
लेबनान, दक्षिण अफ्रीका
अब सपना नहीं देखती वह
बस वक्त की डायरियों पर
लिख रही है कुछ लगातार
वह
उगती हुई दूब पर जाना

चाहती है
प्यार से छूना चाहती है
हवा को, जिंदगी को,
वह जानने लगी है
दुनिया उतनी साफ और
सुंदर नहीं है
जितना समय के एक टुकड़े को
जीते हुए उसने
सोच रखा था।



बहुत दिनों बाद

•

बहुत दिन बहुत रातों तक
फोटो फ्रेम के पीछे आ बैठती
गौरैया अब नहीं आती।

बहुत दिनों बाद
बहुत, बहुत दिनों बाद
[illegible] पूछता हूँ मैं
तुम कैसी हो गौरैया
मेरे प्यार!

पानी, मौसम, धूप छाँव
पेड़, मैं, तू और वही फोटो फ्रेम का कंधा
जिस प्रेम नाम का
कोई
पखेरू अब भी
दिखता है
सुनहरे निरभ्र पीले आकाश में
पंखों पर छाँव करता
प्यार से चोंच मारता

मेरे भी।

और क्या
अपने बड़े-बड़े काले डैनों से
अब भी आवृत कर लेता है
कोई बाज
तुम्हारी पानी-पानी आँखों को
और तुम लौट-लौट आती हो
मेरी फोटो फ्रेम पर।

या कोई राह नयी
ढूँढ ली है तुमने
सपनों के आकाश में।

बहुत-बहुत
बहुत दिनों बाद
मैं पूछता हूँ तुमसे !

गौरैया मेरे प्यार !
कि तुम कैसी होगी ?
तुमने स्नेह की ऊष्मा से भरा
नीड़ चुना होगा
तुम्हारी आँखों में
बर्फ नहीं होगी
तुम शरबिंधी
लहूलुहान
सड़कों पर नहीं
पड़ी होगी।



नौकरी के लिए परीक्षा



हम जाते हैं परीक्षा देने
नौकरी के लिए
उपवास करती माँ
मानती है मान कुल देवता से

हम जाते हैं परीक्षा देने
नौकरी के लिए
बहन की आँखें चमकती हैं
घी के दीयों सी

हम जाते हैं परीक्षा देने
नौकरी के लिए
सहपाठी लड़की और
संभावित पत्नी
सम्पूर्ण घर का सपना
देख डालती है

हम जाते हैं परीक्षा देने
नौकरी के लिए
छोटा भाई
नये-नये कपड़ों और

धूप के चश्मे में
अपने को देखता है

हम जाते हैं परीक्षा देने
नौकरी के लिए
बस में बैठाते वक्त पिताजी
साहब के बाप के बारे में
सोचते हैं

हम जाते हैं परीक्षा देने
नौकरी के लिए
हम अपनी ही आँखों
को देखते हैं
सुरंग सी खोह में
पीछे-पीछे बहुत पीछे
छिपती भागती थरथराती
आँखें



एक दिन



दुख की नदियाँ
डूब जायेंगी आखिर
एक दिन
अथाह-अथाह समंदरों में
कहाँ सिराओगे
फिर दिये तुम अपनी लौ के
नहीं लौटेगा फिर
पक्षी
नाचेगा नहीं मोर
नहीं रंभायेगी गाय
कैसे गाओगे तुम स्तुति
सदानीरा के उद्गम की
सोलह सिंगार धारें भी
टूट-टूट जायेंगी
अखंड-अखंड तपस्या
उजाड़-उजाड़
रेगिस्तानी रेत पर
भर-भर अँजुरी
अपने गीले लहू से
लिखोगे तुम ऋचाएँ क्या ?
क्या सचमुच

इतना वाचाल
इतना तीव्र
इतना ही आसक्त
रह सकेगा
तुम्हारा प्रस्तुत क्षण



यही भय



अभी जब
खत्म हो जायेगी
यह धरती
और मिट जायेगा
सारा का सारा आसमान
किन्हीं बर्बर इच्छाओं में
पी जायेगा कोई एक
या कुछेक
सारी सांसें
फिर भी मुझे उम्मीद है
और मेरा यही भय
देता है मुझे हिम्मत
सचमुच थामे रखेगा
तुम्हारा हाथ
सारी पृथ्वी को
सारे लोगों को
गर्भवती माँ की
आस सा
तुम्हारा हाथ



दुख का प्रश्न



दुख का विज्ञान पढ़ा
दुख का समाजशास्त्र पढ़ा
दुख का अर्थशास्त्र और
राजनीति भी पढ़ी तुमने
क्या तुमने
दुख का अगहन देखा
दुख का चैत देखा
क्या तुमने
दारुण दुख देखा ?



आधी रात



आधी रात
कहीं किसी ने
खत छुपा दिया होगा
पढ़ कर

आधी रात
होंटों पर रख दिये होंगे
होंट किसी ने

आधी रात
करवट बदली होगी
किसी कोढ़या बामन
काने कौए और दानव ने

आधी रात
निकल पड़ी होगी
कोई लड़की यात्राओं पर
साँजा फूलों की टोकरी लेकर

आधी रात
किसी ने सल्फास की तरफ़
हाथ बढ़ाया होगा
सुबह का इन्तज़ार किये बग़ैर



तुम्हारे जैसी लड़की



तुम्हारे जैसी लड़की
अक्सर बसों में, ट्रामों में ट्रेनों में
दिखती हैं पहरो-पहर
चौंक-चौंक जाता हूँ
आँखों और स्मृतियों को दुरुस्त
करता हूँ होशो हवास का परीक्षण
पर यकीन यथार्थ की तहें तोड़कर
सामने आ-आ जाता है
तो क्या तुम जिन्दा हो ?
अपने पूर्ववर्ती रूप में
तुम तब भी नहीं मरीं
मार डाला गया जब तुम्हें
मंडप में मंत्रों से ?
वही बातें वही अंदाज
वही आँखें वही दृष्टि
वैसी ही चाँदी की अंगूठी
वैसा ही रुमाल
हथेलियों पर रची मेंहदी
तो क्या तुम
फिर दार पे खींची जाओगी
तो क्या तुम हारी नहीं थीं

इतिहास के खंडहरों को
घाटियों को,पहाड़ों को
पुलों को पार करती
तुम अपने वर्तमान स्वरूप में
कब तक लड़ोगी ?



मेरी ज़िन्दग़ी



मेरी जिन्दगी
इक ग़ज़ल ही तो है
तुमसे मोहब्बत
मेरा मतला था
तुम्हारे साथ गुज़रे लम्हे
मेरे शेर थे
सिसकियाँ साज़ हैं
बेजुबां अश्क आवाज़ हैं
और इस वक्त
तुम्हारी पुरज़ोर पेशकश पे
मक़ता अर्ज़ कर रहा हूं।



प्रेम



(१)
नदियों से कोई
नहीं जीतता
कभी भी नहीं
बस मछली से हार जाती है
नदी
तमाम थपेड़ों झंझावातों
के बाद भी।

(२)
कितना-कितना
ज़्यादा-ज़्यादा
और भी ज़्यादा नि:संग
और भी ज़्यादा अकेले होते
जाते हैं
जब भी किसी को
छूकर देखते हैं हम।

(३)
अपनी ही धड़कनों के
बीच

बढ़ जाता है अंतराल
कितना ज़्यादा
कि लोग निकल जाते हैं
पूरे के पूरे सुरक्षित।

(४)
सारे दिन एक तरफ़
सारी रातें एक तरफ़
ऐसा भी बँटवारा
करता है भला कोई।

(५)
कविताएँ पढ़ती हैं लड़कियाँ
और
प्रेम करने लगती हैं।

प्रेम करती हैं।
लड़कियाँ और।
कविताएँ बनने लगती हैं।


उस रेल में



पुल पर धड़धड़ाते हुए
बहुत जोर से
ठंड की
स्याह मावस रात में
चीखती है रेल
जैसे फाड़ खायेगी
अँधेरे को कच्चा
और कुछ ही पलों
में खो जाती है
जैसे कुछ स्वीकार लिया
हो उसने ।

उस रेल में
तुम्हारे सिवा
और भी यात्री
रहे होंगे।



एक बार और



(१)

साथी
आज जब कि तुम यहाँ से
कोसों दूर हो
मुझे तुमसे कुछ कहना अभी बाकी है
हमें
उन सैकड़ों मजारों पे
श्रद्धा-सुमन अर्पित करने जाना है
जिनके नीचे दफ़न है
बाग़ी
काफ़िर
साहिर
हमें स्पर्श
स्पर्श करना है
वह अहसास
कटी बाहों का
बहिष्कृत आत्माओं का

(२)

साथी
हमने किए थे

भरी हुई आँखों से क़रार
दूर गाँवों के जंगलों में
बच्चों को है इंतज़ार
पाठशाला का
पाठशाला जिसमें हमें
नया व्याकरण पढ़ाना है।

(३)
साथी
स्याह श्यामपट पर
पढ़ा था
कितना कुछ
चिड़िया-नदी-आज़ादी-गीत
मगर
मिट गए सफेद अक्षर
रह गया स्याह श्यामपट
जहाँ सोचा था हमने
मिटा दे इस कमरे
की व्यवस्था को
साथी
हमें वहाँ जाना बाक़ी है
जहाँ
दमन के खिलाफ़
चीख रही है हवा
हिला रहे हैं हाथ
सतपुड़ा-विंध्याचल गंभीर सोच का
साथी तुम्हें आना है एक बार और
तयशुदा बातों के लिए।
●

चमड़ी के भीतर



हालाँकि पीठ
कमीज से ढकी होगी
और चेहरे माहौल से।

अँधेरे में
सरसराती हुई
अंगुलियाँ पहुँच ही जाएंगी
पीठ पर।

चमड़ी के भीतर
सिली हुई
बूच की रस्सियाँ
चेहरे और
हाथों की
पहचान
बिल्कुल साफ रखेंगी



आओ बात करें



सुनो अब दो बजे हैं
रात के
बात करो कविताओं पर।
सारे लैम्पों, दीयों, कंदीलों
में ठूंस दो शब्द
बाहर बहुत भय है
मंडरा रहा है
काला...बर्बर कुत्ता
अजंता एलोरा
खुजराहो, कोणार्क
एकलव्य या कि बुद्ध
या वह
उदास आँखों
वाली तारिका ?

आओ कुछ भी बात करें
रात के दो बज चुके हैं।



वह क्यों नहीं जिया ?

•

कहीं चालीस दिनों
बाद
कहीं तीन दिनों बाद
कहीं कलियुग की
परिस्थिति देख
जी उठा था
सारी हारी हुई
आत्माओं में
प्रकाश लेकर
सारी रातों में
सपने भरकर
सारी पराजित शामों
के बाद
वह जी उठा था
वह जी उठा था।

वह क्यों नहीं
जिया
मेरे शहर में
मेरे घर में
मेरी हथेलियों पर ?

और तुम तो
सूर्य की तरह
अनश्वरता धारण
किए हुए थीं न
लड़की ?



ऐसा नहीं होगा



सिगरेट सी जलती
आँखों से
उसने मुझे
घूरा
फिर गुरू गंभीर
शब्दों में पूछा
अब वे
तीलियाँ कहाँ हैं ?

ऐसा नहीं होगा
कभी नहीं होगा
तुम्हारे लाख चाहने पर भी
कि आज की
तारीख़
समय की तारीख़
नहीं होगी
तुम कतरब्यौंत कर भी
कुछ नहीं रख सकोगे।



आखिरी बार



धरती
आसमान
और समुद्र
हर कविता में
आ बिराजते हैं
जैसे शिशुओं के सपनों में -
माँ
बहन
और पिता।

पहली बार तुम्हें
देखा तो तुम
आसमान सी फैलती गईं।

दूसरी बार
चूमा तुम्हें तो
तुम समुद्र हो गईं।

तीसरी बार
प्यार किया मैंने तुम्हें
तुम

निरन्तर और निरन्तर
धरती होती गईं !

आखरी बार जब
मैं आगे बढ़ा
मैने देखा
धरती आसमान और समुद्र
कहाँ बचे थे
मनुष्यों के लिए ?

ताजे खून में
तैरता हुआ मैं
भला कैसे भूल सकता हूँ
धरती आसमान और समुद्र ?



मेरे बाद भी



हमलावर
कहीं से भी
कभी भी निकल कर आयेंगे
और हलाक कर देंगे मुझे
जला देंगे मेरा घर
मिटा देंगे मेरा नामोनिशान
नाम लेवा भी मेरा
नहीं छोड़ेंगे कोई।

हमलावर
कहीं से भी
कभी भी निकल कर आयेंगे
किसी भी तारीख को
तीन-इक्कीस-
उन्नीस या बीस
का कोई मानी नहीं
होगा उनके लिए।

हमलावर कहीं से भी
कभी भी निकल कर आयेंगे
मेरे दफ़्तर से मेरे घर से

या मेरे शहर से
हमलावरों की
कोई पहचान नहीं होगी
हमलावर मुझे हलाक कर
खूब अट्टहास करेंगे
और जल चढ़ायेंगे
देवी मंदिर में।

हमलावर
मंदिरों में घुस जायेंगे
मस्जिदों में घुस जायेंगे
जुलूस जलसों भीड़ में
शामिल हो जायेंगे।

हमलावर
अदद बीबी
और सुंदर बच्चों के साथ
पार्कों में होटलों में घूमेंगे

हमलावर
कहीं भी मिल जायेंगे
प्रभाती फेरते
फाग गाते, गरबा करते।

हमलावर सोहर गायेंगे झूम-झूम
लाल हरी भगवा किसी भी
जिल्द से निकालेंगे खंजर और
पार कर देंगे मेरा सीना।

हमलावर शास्त्रीय संगीत सुनेंगे
हमलावर लोकगीत गायेंगे
हमलावर बच्चों की बुनियादी शिक्षा
और ग्रामीण विकास के बारे में
बातें करेंगे।

हमलावर
अखबार से
प्यार से, आचमन से
कहीं से भी निकलकर आयेंगे
और तुरंत हत्यारों में तब्दील
हो जायेंगे।

हमलावर मेरी हत्या के बाद
छुप जायेगें फिर
तारीखों में
दफ़्तरों में
घरों में
अखबारों में
प्यार में।

हमलावर आयेंगे
हमलावर आयेंगे ज़रूर
और हलाक कर देंगे मुझे
कहीं भी-कभी भी
हमलावर आयेंगे
मेरे बाद भी।

हमलावर
मेरी हत्या का मातम मनायेंगे
पुरस्कार बाँटेंगे
फूट-फूट कर रोयेंगे
दोस्ती जतायेंगे।

बस
हमलावर
मुझे कहीं भी
कभी भी
जीवित
नहीं चाहेंगे
हमलावर
आयेंगे
मेरे बाद भी।



आँच कोई और ले गया



(एक)

अंगारे भी हमारी हथेलियों पर
राख भी हमारी मुट्ठी में
आँच कोई और ले गया
वक्त पर हमारा ऐसा
यकीन
क्या ठीक था सपना ?

(दो)

स्याह सपने
स्याह वक्त
डोलते हैं सपनों में
बाज के पंजे
तुम खुश तो हो न सपना
जहाँ भी हो ?

(तीन)

एक पल मुस्करा लेना
बड़ी बात है
बड़ी बात है-
खतों में दिल से उतारकर

शब्द रख देना
तुम्हारे पास
नदी और अलाव जैसे
शब्द
बरकरार तो है न सपना ?

(चार)
खून से लथपथ
हथेली
हथेली
में वही सरसो का फूल
और गेहूँ की बाली है
तुम्हारे पास अब भी
अपना गाँव तो है न सपना ?

(पाँच)
मस्जिद की अज़ान
मंदिर की घंटी
अब तो और भी दू-दूर तक
सुनाई पड़ती है
क्या हमारा
मज़हब भी मिट जाएगा सपना ?

(छः)
मेरे सवालों के
जवाब बदल-बदल गए होंगे
तुम क्या सोचती हो
अब भी सफेद कबूतर

भगवान

•

पाले से मर गए
खेत की तरह

गिरवी रखे हुए
घर की तरह

कब्र खोदते
हाथ कुदाल और
फावड़े की तरह

भगवान बैठा था
हत्याओं के बीच
चील की तरह

•

पागल लड़कियाँ



पागल लड़कियाँ
काढ़ती रहीं
रुमाल
लाल गोठों वाला।

पागल लड़कियाँ
आँजती रहीं सुरमा
रचाती रहीं हिना।

पागल लड़कियाँ
बालती रहीं दीप
देहरियों पर।

उपासी-तिपासी
भूखी-प्यासी
कितनी-कितनी खुश रहीं
पागल लड़कियाँ।

पागल लड़कियाँ
विदेश ब्याही गईं
बाबुल के बाग छोड़ उदास

खूब मुस्कुराती रहीं।

लड़कियाँ पागल नहीं होतीं
दुनिया कैसी होती ?

●

कस्बे में प्रेम



कस्बे में
प्रेम करती है लड़की
पति-परायण और एकनिष्ठ
हो उठती हैं
सारी स्त्रियाँ।

कस्बे में
प्रेम करती है लड़की
कितने-कितने शरीफ हो
उठते हैं
तमाम गुंडे-बलात्कारी
और लफंगे।

कस्बे में
प्रेम करती है लड़की
और एक दिन हार जाती है
सारे जीते हुए स्वप्न

कस्बे में
एक दिन लड़की के
मारे जाने की खबर आती है।

कस्बा बच जाता है
पाप से, प्रलय से
कैसे बचेगा कस्बा
अपने आप से ?



लोगों से डरो



मर जायेगा
डाकिया
मर जायेगा शहर।

नक्शा
गली घर मोहल्ला
सब मारा जायेगा।

खतरनाक क्षणों पर
तैरती साँसें सब।

एक दिन आखिरी
चिट्ठी आयेगी
लिफाफे की तरह फट जायेंगे लोग ।

उदास और फीके
हो जायेंगे स्वप्न।

आँखें रेतघाट
सी सून सपाट ।

नीला दुपट्टा
संकेत बढ़ी हुई दाढ़ी के
मिट जायेगा सब
तुम्हे पता नहीं
पागल लड़की
मैंने अभी-अभी
देखा है
ज़िरह-बख़्तर पहने
दार उठाये
कुछ लोगों को
लोगों से डरो।



तारीख़ें



किसी एक तारीख़ में
आँखें
आधी रात को
झाँकती हैं हमारे भीतर
और पूछती हैं-
क्या दीवारों पर टँगे
पोथी-पंचांग, सरकारी केलेण्डर ही
समय और इतिहास होते हैं?
उन तारीख़ों पर
जिन पर तुमने गोले लगाये थे
(या काले कर दिए थे)
क्या उनका कोई मतलब नहीं ?
एक तारीख़ है-
जब हमने बबलू को
किताबें माँगने पर
दिए थे तमाचे और
गुड़िया को ठेल दिया था
चौके में
और यहीं से शुरु होता है
बच्चों और पत्नी और हमारा
विक्रम, ईस्वी ,हिज्री।

तारीख़ें यूँ बुनियाद रखतीं
लहूलुहान पाँवों से
हमारे जीवन के कैलेण्डर को
तर करती बढ़ती हैं
बढ़ती हैं
और एक स्याह, बर्बर
इतिहास गढ़ती हैं
इसी में एक मरी हुई
तारीख़ तैर जाती है
जिसमें लुट गया था
हमारा प्यार
दुनिया की तमाम
तारीख़ों के
बावजूद।
और लगभग इन्ही तारीख़ों में
हम संविधान को
स्वीकारते हैं
यह भी एक तारीख़ होती है
कि हमारा सहपाठी गुंडा
मंत्री बन जाता है।

तमाम असफलताओं
बेचारगी और लाचारी
और हार के बाद भी
लोगों से हाथ मिलाना
मुस्कुराना जीना
फिर हमारा
पृथ्वी हो जाना एक तारीख़ है

एक तारीख़ है हमारा
सूरज में झुलस जाना
काला ठनक।

एक तारीख़ में हम बहुत चाहते हैं
हमारी तारीख़ें
यात्रा करती हुई
दर्ज हो जायें
किसी पंचांग पर
किसी केलेण्डर पर
परन्तु
तारीख़ें नहीं आयीं
कभी लौट कर हमारे सपनों से
तमाम फूलों आँसुओं
श्रम और हरकारों के।

पहले खत की खुशी सी तारीख़ें
बिछुड़ जाने के दुख की तारीख़ें।

हमारा अल्सर फट जाये
तारीख़ की नदियाँ
दुखों के पहाड़ से समूची
बह जायें
और पहाड़ फिर भी
रह जायें इससे पहले
एक सवाल है
कि दुनिया के
फतह के दिन

या फातिहा के दिन
क्या हमारी तारीख़ों
का भी हिसाब होगा
और आगामी
केलेण्डर तय करने में
हमारे बच्चे, पत्नी और हम भी
कोई क्षण होंगे ?


तुम्हारा हाथ



सरसराती पलकों पर
करता है दस्तखत
रोज तुम्हारा हाथ
तैरता है तुम्हारा हाथ
मखमली कोनों और
लोहे के बुरादे से बना।

एम.एफ. हुसैन के चित्र
दिखाता
लातिन अमरीका गाता
दुनिया की मरी कटी
लड़कियों के टुकड़ों का
कोलाज थामें।

तुम्हारा हाथ
थरथराती पलकों पर
करता है दस्तखत
तैरता है एक स्वप्न
जो मेरा है
अमावस के अँधियारे में
मैं पहुँचता हूँ

सीधे उसके नज़दीक

तुम्हारा हाथ
क्या बीच में
कोई
हलाक कर देगा मुझे ?
मैं चाहता हूँ, तुम
अब
अपना हाथ
मेरी धड़कनों पर रख दो ।



कहने को

●

पेड़ का हरापन
बेल की वजह से
था
कहने को वह पेड़ था।

नदी कहने भर को
नदी थी
उसका बहाव
पहाड़ों और
समुद्रों पर आश्रित था।

कहने को कई
वारिस थे
कई मालिक थे
सारी संभावनाओं के
मगर
सच कुछ और थे।

●

मिथक



जब मैं लौटा मेरी अस्मिता समाप्त
हो चुकी थी
यहाँ तक कि इतिहास भी।

धरती की चट्टानें
ऊष्मा, लावा और
भयानक उमस पार करते हुए
मैं पाताल तक पहुँच ही
गया था
बस पानी ही नहीं ला सका।

उड़ते-उड़ते मैं आसमान
से सिर्फ कुछ ही दूर था
कि गिद्ध ने झपट लिया
और आसमान छू न सका मैं

लगातार अनवरत
अहर्निश सप्तदीप नवखंड
दौड़ते दौड़ते समुद्र के
किनारे मेरी साँसे थक गईं
और जो बच गई थीं वे

तड़पते रोहू को देनी पड़ी
और मैं प्रणाम कर न सका

मेरी संघर्ष यात्राओं का
अधूरापन
क्या असफल
करार दिया जायेगा ?
क्या मेरी
यात्राओं को ही
नकार दिया जायेगा

यदि ऐसा है
तो सुनो
प्रमथ्यु नहीं हुआ था
अभिमन्यु भी नहीं
एकलव्य तो
कदापि नहीं
तुमने जो सुना
वो सचमुच
मिथक था !
●

कल



आसन्न संकट
कल आ ही जायेगा
बैठ जायेगा
आँगन में, मन पर
तुलसी चौबारे पर
द्वार पर
घाट पर
प्रस्थित सपने और
सुख
तुम्हें हमारा
प्यार कुबूल होगा
कि नहीं
हमारा
अभिवादन
हमारा
हिलता हाथ
तुम्हारी निगाहों में
कहीं तो होगा न ?



अन्ततः



सब कुछ फिसल जायेगा
पल्लव-चोल-विजयनगर
अनिल-अचला सब कुछ
रेत को निचोड़ते हुए
वेद-वेदान्त-उपनिषद
सब कुछ -सब कुछ
क्या कायम रह सकेगा
तुम्हारा
प्यार
तुम्हारा संसार ?

क्या तुम
समय की ओर
धरती की धुरी की
तरफ अपनी
निराश यात्राओं को
नहीं मोड़ सकते ?
मेरी अस्थियाँ
ध्रुवों पर नहीं
धुरी पर विसर्जित हों
मेरे पसीने की बूँद
धुरी पर गिरे।



हम कविता नहीं लिखते

●

भागते हुए
कई-कई दिन
और
जागते हुए
कई-कई रातें
काट देते हैं
और हम कविता नहीं लिखते
नहीं लिखते
आंखों में उमड़ा हुआ
समन्दर
ओंठों पर ठहरा हुआ
चीत्कार
सपनों में दुबका संसार
और मरा हुआ सच्चा
प्यार
और हम महज जिये जाते हैं
चंद किताबें पढ़ते हुए
मुस्कुरा-मुस्कुरा कर
हाथ मिलाते हुए
किसी दिन अनायास
हम देखते हैं
बैलों से घिर चुके हैं
और हमारे मुँह पर
जुगाली का फेन है।

●

पता नहीं



पता नहीं
कौन कौन लौटे थे
साथ साथ फिर
काले पहाड़ पर बैठकर
फूट-फूट रोये थे जो।

पता नहीं
कौन ऋचाओं को
शब्द देता रहा ?

अश्रुपूर्ण नेत्रों से
संध्यागीत गाता
रहा ?

माथा टेकता रहा
तुलसी चौबारे पर ?

पता नहीं
तुम नहीं लौटी थीं
फिर।

कोई नहीं लौटा
था।



पिछले दिनों

●

पिछले दिनों
नरसूद्या ने पटेल के घर
काम छोड़ दिया
बलाही की लुगाई ने
जमींदार का कहा मानने से
इनकार कर दिया
चपरासी ने बॉस को गाली दे दी
शहर में फिर
कुछ लड़कियों ने भागने की कोशिश की
और
एक विधवा ने प्रेम किया।
बच्चों ने क्लास में
नए-नए सवाल पूछे
मैंने देखा
कुछ लोग पेट दबाकर
टी.वी.के सामने से हट गए
और
नोट लेकर जुलूसों में जाने से मना कर दिया।

पिछले ही दिनों
कुछ बड़े लोग मिले

फिर कानों में कुछ बातें की।

पिछले दिनों
ऐसा लगा समय ज़िन्दा है
वक़्त के जिस्म में बाकी है हरारत
हवाओं में बेचैनी बुन रही है कुछ
और डूबा जाता हूँ मैं,
आशाओं में
लाल, सुर्ख आशाओं में।



फिर लगा मुझे

●

मैं उनसे मिला
इनसे मिला
बहुतों से मिला और
मिलता रहा
फिर लगा मुझे
किसी से नहीं मिलना चाहिए था ॥ १ ॥

ढेर का कुछ हिस्सा
हटाया
और निकाला एक चमकदार
रिश्ता
झटकारा
कुछ धूल गिरी
रिश्ता पहनकर मैंने
फिटनैस परखी
आइने में
पहले लगा ठीक दिख रहा हूँ
फिर लगा
उधार की चमक
उधार की होती है ॥२ ॥

फिर कानों में कुछ बातें की।

पिछले दिनों
ऐसा लगा समय ज़िन्दा है
वक़्त के जिस्म में बाकी है हरारत
हवाओं में बेचैनी बुन रही है कुछ
और डूबा जाता हूँ मैं,
आशाओं में
लाल, सुर्ख आशाओं में।



फिर लगा मुझे

●

मैं उनसे मिला
इनसे मिला
बहुतों से मिला और
मिलता रहा
फिर लगा मुझे
किसी से नहीं मिलना चाहिए था ॥ १ ॥

ढेर का कुछ हिस्सा
हटाया
और निकाला एक चमकदार
रिश्ता
झटकारा
कुछ धूल गिरी
रिश्ता पहनकर मैंने
फिटनैस परखी
आइने में
पहले लगा ठीक दिख रहा हूँ
फिर लगा
उधार की चमक
उधार की होती है ॥२ ॥

फिर कानों में कुछ बातें की।

पिछले दिनों
ऐसा लगा समय ज़िन्दा है
वक़्त के जिस्म में बाकी है हरारत
हवाओं में बेचैनी बुन रही है कुछ
और डूबा जाता हूँ मैं,
आशाओं में
लाल, सुर्ख़ आशाओं में।



फिर लगा मुझे



मैं उनसे मिला
इनसे मिला
बहुतों से मिला और
मिलता रहा
फिर लगा मुझे
किसी से नहीं मिलना चाहिए था ॥ १ ॥

ढेर का कुछ हिस्सा
हटाया
और निकाला एक चमकदार
रिश्ता
झटकारा
कुछ धूल गिरी
रिश्ता पहनकर मैने
फिटनैस परखी
आइने में
पहले लगा ठीक दिख रहा हूँ
फिर लगा
उधार की चमक
उधार की होती है ॥२ ॥

क्षमा निवेदन



लौट गया
समय झाँककर
खिड़की से
बचा लिया
सद्यप्रसूत
नवजन्मा शिशु।
प्रणाम की मुद्रा में
आ गया था
आ गया था
साँसों और गले तक
लौट गया लेकिन
लौट गया
सीलन थी अँधेरा था
ऊष्मा के लिए रजाई
नहीं थी
सिर्फ थी हथेली
कितना असमर्थ था
घर
समय के सत्कार में।
समय को साधने में
हे देव ! हे राक्षस ! हे असुर !
हे दिशाओं ! हे धरा ! हे आकाश
मुझे माफ कर देना !



कोई शब्द दिखे तो



एक चिट्ठी
लिखूँगा
शब्द-दर-शब्द
पँक्ति-दर-पँक्ति
तमाम कोरेपन को
पार करते हुए
चुपचाप मैं खारेपन
की नदी में उतर पडूँगा !

गीली कोरें
तय करने लगेंगी
रास्ते पगडंडियाँ और काल
की अबाधता ।

चिट्ठी पर
पता लिखते वक्त
रोशनाई गिर जायेगी
हाथों पर हिमालय
जम जायेगा
अँधेरा कितने साफ शब्दों में
चिट्ठी पढ़ जायेगा !

तुम्हें कोई शब्द दिखे
तो मुझे सलाम करना !



कहाँ-कैसे ?

●

आओ देखें
खोजें
करें मुआयना आज

दस साल पहले
सुदूर शहरों में लिखी
हमारी लम्बी-लम्बी चिट्ठियाँ

शहर छोड़ते
यात्रा पर जाते
कही गई बातें

हमारी मन्नतें
हमारे कबूले चढ़ावे
और उपवास

रास्ते में
छुपाई हुई आँखे
बचाई हुई बातें
इस जाते हुए साल
और बीतती हुई सदी में

धरती के नक़्शे
और मन के इतिहास में
कहाँ हैं और
हमें कैसे देखती हैं।



मैं भी

●

लड़कियाँ
जलाई जाती हैं
लड़कियों से होता है बलात्कार
लड़कियाँ
धुंधिया रही हैं
हर घर-हर गली-हर मोहल्ले में।

लड़कियों की आँखों में पकती हैं
कविताएँ
लड़कियों की आँखे कहती हैं
सदियों की कहानी।

हम देते रहे हैं उन्हें ठप्पा
लड़की
औरत
विधवा
अपनी ही तय की हुई आजादी और वर्जनाओं का।

मैं भी हिस्सा हूँ,
सतत होते आ रहे इस अपराध का
अपने अच्छे कपड़ों

और बातों के बावजूद।

मगर मुझे माफ कर देना
तुम
जब साँस को साँस कह सको
हवा को हवा कह सको
मुझे माफ कर देना तुम
जब
वह सच कहा जाये
जो
आदम और हव्वा से लेकर
अनिता और आलम तक
कभीं नही कहा गया
कभी नहीं कबूला गया
●

शब्द

•

वही
धुंधला होता कुछ
काग़ज
वही हरूफ
वैसी की वैसी
बनावट जैसी
कि पहले थी।

वही डाकखाने
की मोहर
वही सात ताले
में बंद खज़ाना
वही-वही बातें
चिंतातुर रातें
कितनी-कितनी बार
पढ़ो
दस और पंद्रह साल
बाद भी
जब भी खोलो
एक नया अर्थ
पाया जा सकता है

उससे।

साथियों की तरह
शब्द भी कितने
सार्थक होते हैं।



हमेशा के लिए



(एक)
कोई ख़त
कोई निशानी
शेष नहीं
डायरी से पता भी फाड़कर जला दिया
यह सोचकर
एक दिन भूल जायेंगे
सब कुछ लेकिन
धरती के नक़्शे से
तुम्हारा शहर मिटता नहीं।

(दो)
लिखते रहना चिट्ठियाँ
कुछ तुम्हारे भीतर भी
बनता रहेगा
मेरे भीतर भी कुछ
कुछ ढहता रहेगा
और ढहेगा

(तीन)
उसने ख़त लिखा एक दिन

और वह
साँस-साँस में
फैल गई
उसने ख़त लिखा एक दिन
और वह मर गयी
अब हमेशा के लिए



मरने से पहले



मैं जाना चाहता हूँ
इंदौर के उस प्लेटफार्म पर
जहाँ छोड़ दिया था दोस्त को
कभी न लौटकर आने के लिए।

मैं जाना चाहता हूँ
सन् ८९ की उस तारीख़ में
जब दस सालों की कसमों, कानूनों, ख़तों
की जद्दोजहद
रातों के अँधेरों और ख़यालों में
ख़त्म हो गई थी।

मैं जाना चाहता हूँ
उन बच्चों की यादों में
जिन्होंने मुझे चूम कर छोड़ दिया
और सब कुछ भूल गए।

मैं जाना चाहता हूँ
उन घरों में जहाँ
चुपचाप छतों पर, चौखटों पर
खड़ी लड़कियाँ

किसी दिन सल्फास खा लेती हैं॥

मैं जाना चाहता हूँ
ताकि
हारने से पहले
भूलने के विरुद्ध
और
मरने से पहले
एक परिभाषा
प्यार और संभावना की
रख सकूँ
सबके लिए





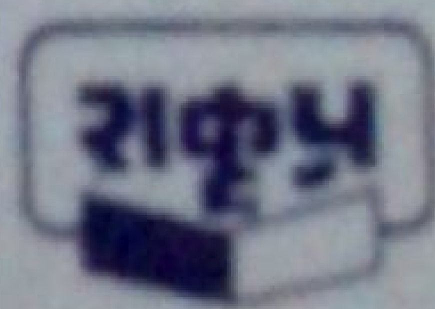
धर्मेन्द्र धारे

- 21, मार्च 1967 को हरदा (म. प्र.) के एक किसान परिवार में जन्म।
- सागर विश्वविद्यालय से हिन्दी में प्रावीण्य सूची में स्थान लेते हुए एम. ए. प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण।
- निमाड़ी लोकगीतों पर पी. एच. डी. सम्पन्न।
- जीवन और समाज से सरोकार रखने वाले मुद्दों में रुचि।
- सम्प्रति शासकीय कुसुम महाविद्यालय सिवनी (मालवा) के हिन्दी विभाग में सहायक प्राध्यापक पद पर कार्यरत।

सम्पर्क : खेड़ीपुरा (नाला)
हरदा (म. प्र.) 461 331



ISBN : 81-7365-002-5



रामकृष्ण प्रकाशन

सावित्री सदन, तिलक चौक

विदिशा (म.प्र.)